छायालोक

शम्भूनाथसिंह

प्रकाशक

युग मन्दिर : : उन्नाव

निवेदन

'रूपरश्मि' के बाद 'छायालोक'। जीवन के प्रथम प्रभात में जीवन और जगत के सौन्दर्य की जो रंगीनी 'रूपरश्मि' में चित्रित हुई, यौवन की चढ़ती बेला में सत्य की प्रखर किरणों ने उसे मिटा दिया। जीवन के पथ पर बढ़ते हुए कवि-सहज सुकोमल मन ने क्लान्त-श्रान्त होकर विश्राम चाहा। उसे जीवन के सपनों की शीतल छाया अनायास ही मिल गयी। मन को उस छाया में विश्रान्ति मिली, आगे की यात्रा के लिए आवश्यक शक्ति मिली। 'छायालोक' में उन्हीं श्रम और विश्राम के क्षणों की विविध अनुभूतियाँ अभिव्यक्त हुई हैं। ये कवितायें जीवन के मीठे-कड़ुवे सत्यों की स्वप्निल छायायें हैं। इनमें बहुरूपता होते हुए भी एक क्रमबद्धता है। इनकी भावधारा अन्धकार की ओर से प्रकाश की ओर प्रवाहित हुई है जिसे छाया-देश की, अभाव, निराशा, आभास, पहिचान, उपालम्भ, आशा, प्राप्ति, संयोग, आनन्द, बिछुड़न, वेदना, प्रकाश आदि विभिन्न भूमियों की यात्रा करनी पड़ी है। इन भूमियों में मन पलायन के लिए नहीं, शक्ति-संचय के लिए रमा है। अपनी अगली यात्रा में जीवन और जगत के संघर्ष, स्फूर्ति, साहस, सक्रियता, प्रगति, आशा, आनन्द आदि की स्वस्थ भूमियों के गीत गा सकूँगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

काशी
१५ अगस्त १९४५

शम्भूनाथ सिंह

निवेदन

'रूपरश्मि' के बाद 'छायालोक'। जीवन के प्रथम प्रभात में जीवन और जगत के सौन्दर्य की जो रंगीनी 'रूपरश्मि' में चित्रित हुई, यौवन की चढ़ती बेला में सत्य की प्रखर किरणों ने उसे मिटा दिया। जीवन के पथ पर बढ़ते हुए कवि-सहज सुकोमल मन ने क्लान्त-श्रान्त होकर विश्राम चाहा। उसे जीवन के सपनों की शीतल छाया अनायास ही मिल गयी। मन को उस छाया में विश्रान्ति मिली, आगे की यात्रा के लिए आवश्यक शक्ति मिली। 'छायालोक' में उन्हीं श्रम और विश्राम के क्षणों की विविध अनुभूतियाँ अभिव्यक्त हुई हैं। ये कवितायें जीवन के मीठे-कड़ुवे सत्यों की स्वप्निल छायायें हैं। इनमें बहुरूपता होते हुए भी एक क्रमबद्धता है। इनकी भावधारा अन्धकार की ओर से प्रकाश की ओर प्रवाहित हुई है जिसे छाया-देश की, अभाव, निराशा, आभास, पहिचान, उपालम्भ, आशा, प्राप्ति, संयोग, आनन्द, बिछुड़न, वेदना, प्रकाश आदि विभिन्न भूमियों की यात्रा करनी पड़ी है। इन भूमियों में मन पलायन के लिए नहीं, शक्ति-संचय के लिए रमा है। अपनी अगली यात्रा में जीवन और जगत के संघर्ष, स्फूर्ति, साहस, सक्रियता, प्रगति, आशा, आनन्द आदि की स्वस्थ भूमियों के गीत गा सकूँगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

काशी
१५ अगस्त १९४५

शम्भूनाथ सिंह

कल्पना की उस लजीली लता को

जिसके

सुरभि-तरंगित फूल

मेरे प्राणों के स्वर बन गये हैं

कल्पना की उस लजीली लता को

जिसके

सुरभि-तरंगित फूल

मेरे प्राणों के स्वर बन गये हैं

१

समय की शिला पर मधुर चित्र कितने
किसी ने बनाये, किसी ने मिटाये!

किसी ने लिखी आँसुओं से कहानी
किसी ने पढा किन्तु दो बूँद पानी
इसी में गये बीत दिन जिन्दगी के
गई घुल जवानी, गई मिट निशानी।

विकल सिन्धु से साध के मेघ कितने
धरा ने उठाये, गगन ने गिराये

शलभ ने शिखा को सदा ध्येय माना
किसी को लगा यह मरण का बहाना
शलभ जल न पाया शलभ मिट न पाया
तिमिर में उसे पर मिला क्या ठिकाना

प्रणय-पन्थ पर प्राण के दीप कितने
मिलन ने जलाये, विरह ने बुझाये!

१

समय की शिला पर मधुर चित्र कितने
किसी ने बनाये, किसी ने मिटाये!

किसी ने लिखी आँसुओ से कहानी
किसी ने पढा किन्तु दो बूँद पानी
इसी में गये बीत दिन जिन्दगी के
गई घुल जवानी, गई मिट निशानी।

विकल सिन्धु से साध के मेघ कितने
धरा ने उठाये, गगन ने गिराये

शलभ ने शिखा को सदा ध्येय माना
किसी को लगा यह मरण का बहाना
शलभ जल न पाया शलभ मिट न पाया
तिमिर में उसे पर मिला क्या ठिकाना

प्रणय-पन्थ पर प्राण के दीप कितने
मिलन ने जलाये, विरह ने बुझाये!

२

उर के खुले के खुले ही रहे द्वार !

पथ में बिछे प्राण
मुखरित प्रणय-गान
जलते युगों से
नयन-दीप अम्लान !

पर शून्य में ही बिखरता रहा प्यार !
उर के खुले के खुले ही रहे द्वार !

दिन थे प्रणय-हास
निशि प्यार के पाश,
उड़ती रही ले
प्रणय-गंध हर साँस !

पर सत्य कब हो सका स्वप्न-अभिसार ?
उर के खुले के खुले ही रहे द्वार !

२

उर के खुले के खुले ही रहे द्वार !

पथ में बिछे प्राण
मुखरित प्रणय-गान
जलते युगों से
नयन-दीप अम्लान !

पर शून्य में ही बिखरता रहा प्यार !
उर के खुले के खुले ही रहे द्वार !

दिन थे प्रणय-हास
निशि प्यार के पाश,
उड़ती रही ले
प्रणय-गंध हर साँस !

पर सत्य कब हो सका स्वप्न-अभिसार ?
उर के खुले के खुले ही रहे द्वार !

३

मुक्ति-कारा की अचल प्राचीर !
मैंने क्या किया था ?

अर्चना मैंने सदा की
साधना मैंने सदा की
प्राण के मृदु बन्धनों की
कामना मैंने सदा की

पर मिली यह शून्य की जंजीर !
मैंने क्या किया था ?

विश्व में मैंने दिये भर
वन्दना के गीत के स्वर
रिक्तता भरने चला निज
बन्धनों की प्यास लेकर

मुक्ति पर मुझको मिली बेपीर !
मैंने क्या किया था ?

३

मुक्ति-कारा की अचल प्राचीर !
मैंने क्या किया था ?

अर्चना मैंने सदा की
साधना मैंने सदा की
प्राण के मृदु बन्धनों की
कामना मैंने सदा की

पर मिली यह शून्य की जंजीर !
मैंने क्या किया था ?

विश्व में मैंने दिये भर
वन्दना के गीत के स्वर
रिक्तता भरने चला निज
बन्धनों की प्यास लेकर

मुक्ति पर मुझको मिली बेपीर !
मैंने क्या किया था ?

४

मेरी अमिट भूख मेरी अमर प्यास !

मन की कथा मौन
तन की व्यथा मौन
क्रन्दन विकल प्राण—
के ये सुने कौन ?

हँसते रुदन का करे कौन विश्वास !
मेरी अमिट भूख, मेरी अमर प्यास !

दुख-सिन्धु का कूल
मैं ही गया भूल
मेरी तरी झेलती
अश्रु के फूल

फिर कौन मेरा लिखे हास-इतिहास !
मेरी अमिट भूख, मेरी अमर प्यास !

४

मेरी अमिट भूख मेरी अमर प्यास !

मन की कथा मौन
तन की व्यथा मौन
क्रन्दन विकल प्राण—
के ये सुने कौन ?

हँसते रुदन का करे कौन विश्वास !
मेरी अमिट भूख, मेरी अमर प्यास !

दुख-सिन्धु का कूल
मैं ही गया भूल
मेरी तरी झेलती
अश्रु के फूल

फिर कौन मेरा लिखे हास-इतिहास !
मेरी अमिट भूख, मेरी अमर प्यास !

५

जिस पर मुसकाती रूप-किरण
मुझसे वह दूर किनारा है।

जीवन का मुग्ध शलभ मैं था
तम की झंझा में उड आया
प्राणों की बलि देकर, न
किसी के प्राणों को बहला पाया

तम का यह मौन गहन कानन
जिसमें सम जीवन और मरण
बुझती जाती मन की ज्वाला
भी छू तम की शीतल छाया

अब तो नयनों में क्षण भर भी
झलका करती मधु प्यास नहीं
जिस पर लहराता है जीवन
मुझसे वह दूर किनारा है।

५

जिस पर मुसकाती रूप-किरण
मुझसे वह दूर किनारा है।

जीवन का मुग्ध शलभ मैं था
तम की झंझा में उड आया
प्राणों की बलि देकर, न
किसी के प्राणों को बहला पाया

तम का यह मौन गहन कानन
जिसमें सम जीवन और मरण
बुझती जाती मन की ज्वाला
भी छू तम की शीतल छाया

अब तो नयनों में क्षण भर भी
झलका करती मधु प्यास नहीं
जिस पर लहराता है जीवन
मुझसे वह दूर किनारा है।

६

मुझे जिन्दगी का सहारा न मिलता !
बहा जा रहा हूँ किनारा न मिलता !

गगन - सिन्धु में रस
समाता नहीं है,
धरा में सुधा की
लहर बह रही है,

बुझे पर जलन प्राण की आज जिससे
मुझे अश्रु दो बूँद खारा न मिलता !

गगन रूप के दीप
कितने, जलाता,
तिमिर - पन्थ पर—
चाँदनी भी बिछाता,

जले किन्तु जो प्राण-पथ पर अचचल
नयन का मुझे ज्योति-तारा न मिलता !

६

मुझे जिन्दगी का सहारा न मिलता !
बहा जा रहा हूँ किनारा न मिलता !

गगन - सिन्धु में रस
समाता नहीं है,
धरा में सुधा की
लहर बह रही है,

बुझे पर जलन प्राण की आज जिससे
मुझे अश्रु दो बूँद खारा न मिलता !

गगन रूप के दीप
कितने, जलाता,
तिमिर - पन्थ पर—
चाँदनी भी बिछाता,

जले किन्तु जो प्राण-पथ पर अचचल
नयन का मुझे ज्योति-तारा न मिलता !

७

भार हलका हो न पाता !

कह रही मुझसे यहाँ
वन - घाटियाँ सौ सौ कथाये
जागती ही जा रही हैं
किन्तु इस मन की व्यथायें

स्वप्न के ससार में भी
यह दुखी मन सो न पाता !
भार हलका हो न पाता !

रूप की किरणें हृदय का
द्वार मधु से सींच जाती
स्निग्ध स्वर धारा हृदय तक
एक रेखा खींच जाती

किन्तु छवि के हास में यह
मन स्वय को खो न पाता !
भार हलका हो न पाता !

७

भार हलका हो न पाता !

कह रही मुझसे यहाँ
वन - घाटियाँ सौ सौ कथाये
जागती ही जा रही हैं
किन्तु इस मन की व्यथायें

स्वप्न के ससार में भी
यह दुखी मन सो न पाता !
भार हलका हो न पाता !

रूप की किरणें हृदय का
द्वार मधु से सींच जाती
स्निग्ध स्वर धारा हृदय तक
एक रेखा खींच जाती

किन्तु छवि के हास में यह
मन स्वय को खो न पाता !
भार हलका हो न पाता !

मेरे मन, ओ एकाकी मन
तुम क्या जानो जीवन।

जिसमें शरमाते शरमाते
बँध जाते हैं लोचन
कह देता युग युग की साधें
क्षण भर का मौन मिलन
जिसमें साँसों का स्वर बनता
दो प्राणों का गायन

मेरे मन ओ भोले मन तुम
क्या जानो वह बन्धन।

जिसमें सपनों से छा जाते
सुधि के सतरंगे घन।
भींगा भींगा रहता निशि दिन
मधु से मन का आँगन
प्राणों का भार बना करती
हैं क्षण भर की बिछुड़न

८

मेरे मन, ओ एकाकी मन
तुम क्या जानो जीवन।

जिसमें शरमाते शरमाते
बँध जाते हैं लोचन
कह देता युग युग की साधें
क्षण भर का मौन मिलन
जिसमें साँसो का स्वर बनता
दो प्राणों का गायन

मेरे मन ओ भोले मन तुम
क्या जानो वह बन्धन।

जिसमें सपनो से छा जाते
सुधि के सतरंगे घन।
भींगा भींगा रहता निशि दिन
मधु से मन का आँगन
प्राणों का भार बना करती
है क्षण भर की बिछुड़न

६

पुकारा मैंने कितनी बार !
किसी को मैंने कितनी बार !

चाँदनी ने मुझको कल रात
फूल के मारे सौ सौ तीर ।
जलाती सपनों का ससार
उठी ज्वाला सी मन में पीर ।

लपट से घिर कर नभ के द्वार
पुकारा मैंने कितनी बार !
किसी को मैंने कितनी बार !

धुआँ बन कर प्राणों का दाह
साँस में उडी गन्ध मधु हीन,
रात भर जलते थे चुपचाप
नयन ये नीराजन में लीन

६

पुकारा मैंने कितनी बार !
किसी को मैंने कितनी बार !

चाँदनी ने मुझको कल रात
फूल के मारे सौ सौ तीर !
जलाती सपनों का ससार
उठी ज्वाला सी मन में पीर !

लपट से घिर कर नभ के द्वार
पुकारा मैंने कितनी बार !
किसी को मैंने कितनी बार !

धुआँ बन कर प्राणों का दाह
साँस में उडी गन्ध मधु हीन,
रात भर जलते ये चुपचाप
नयन ये नीराजन में लीन

१०

युगों से दीप प्राणों का
किसी की याद मे जलता !

समय के शून्य में देते
शिखा के धूम्र घन फेरी
प्रणय की इन्द्रधनु बनती
न पर आराधना मेरी

युगों से प्यास का ज्वाला-
मुखी बन प्यार है पलता !

विरह की साँझ झंझा की
कथा ले राह में आयी
कठिन झकझोर से भी पर
नहीं यह ज्योति बुझ पायी

१०

युगों से दीप प्राणों का
किसी की याद में जलता !

समय के शून्य में देते
शिखा के धूम्र घन फेरी
प्रणय की इन्द्रधनु बनती
न पर आराधना मेरी

युगों से प्यास का ज्वाला-
मुखी बन प्यार है पलता !

विरह की साँझ झंझा की
कथा ले राह में आयी
कठिन झकझोर से भी पर
नहीं यह ज्योति बुझ पायी

११

बरस लो प्राण-घन मेरे !

बजा कर वेणु प्राणों का
स्वरों से प्यार बरसाया
किसी के प्राण-रन्ध्रों में
न पर जब गान लहराता

नयन के शून्य में तिर-तिर
बरस लो प्राण-घन मेरे।

न समझा था कि मन का
इन्द्रधनु बन जायगा सपना
मरण सा मौन हूँ अब मैं
न कोई है यहाँ अपना

डुबा सब चेतना फिर-फिर
बरस लो प्राण-घन मेरे !

११

बरस लो प्राण-घन मेरे!

बजा कर वेणु प्राणों का
स्वरों से प्यार बरसाया
किसी के प्राण-रन्ध्रों में
न पर जब गान लहराता

नयन के शून्य में तिर-तिर
बरस लो प्राण-घन मेरे।

न समझा था कि मन का
इन्द्रधनु बन जायगा सपना
मरण सा मौन हूँ अब मैं
न कोई है यहाँ अपना

डुबा सब चेतना फिर-फिर
बरस लो प्राण-घन मेरे!

१२

सपने भी मुझको भूल गये !

निष्ठुर कितना कर्मों का मग
कितना छलता जीवन जगमग
करुणा के चरणों पर क्षणभर
झुक पा न रहा प्राणों का जग

अब डूब नयन के सागर में
मन की डाली के फूल गये ।

होता नव किरनों का गायन
मधु-रास मचाता नील गगन
उन्मुक्त न उड़ पाते पर अब
क्षण भर मेरे प्यासे लोचन

मादक मधु धारा के पागल
ये सूख अधर के फूल गये ।

१२

सपने भी मुझको भूल गये !

निष्ठुर कितना कर्मों का मग
कितना छलता जीवन जगमग
करुणा के चरणों पर क्षणभर
झुक पा न रहा प्राणों का जग

अब डूब नयन के सागर में
मन की डाली के फूल गये।

होता नव किरनों का गायन
मधु-रास मचाता नील गगन
उन्मुक्त न उड़ पाते पर अब
क्षण भर मेरे प्यासे लोचन

मादक मधु धारा के पागल
ये सूख अधर के फूल गये।

१३

बीतेगा क्या यों ही जीवन !

जाने किस दुनिया मे चलता
जाने किस ज्वाला में जलता
नयनों के उमडे सागर से
अपने प्यासे मन को छलता

मुझमें ही लय होने को हैं
घिर घिर आते मेरे ये घन !
बीतेगा क्या यों ही जीवन ?

बेसुध हो जाता मैं सुन सुन
जाने किस पायल की रुनझुन
रख देता हूँ पथ पर, अपने—
प्राणों के ये शतदल चुन चुन

१३

बीतेगा क्या यों ही जीवन ?

जाने किस दुनिया मे चलता
जाने किस ज्वाला में जलता
नयनों के उमडे सागर से
अपने प्यासे मन को छलता

मुझमें ही लय होने को हैं
घिर घिर आते मेरे ये घन !
बीतेगा क्या यों ही जीवन ?

बेसुध हो जाता मैं सुन सुन
जाने किस पायल की रुनझुन
रख देता हूँ पथ पर, अपने—
प्राणों के ये शतदल चुन चुन

१४

मेरे पंख ये झर जायँ !

बन्दी मैं गगन के द्वार
कर पाता न मुक्त विहार,
जीवन बन गया जब भार

जीवन में न जो पूरे हुए
अरमान, वे मर जायँ !
मेरे पंख ये झर जायँ !

भूखी सी युगों की रात—
करुणा की विकल बरसात—
पतझर की चिता की बात—

जीवन में हुए जो छिद्र,
उनको मत स्वरित कर जायँ !
मेरे पंख ये झर जायँ !

१४

मेरे पख ये झर जायँ !

बन्दी मैं गगन के द्वार
कर पाता न मुक्त विहार,
जीवन बन गया जब भार

जीवन में न जो पूरे हुए
अरमान, वे मर जायँ !
मेरे पख ये झर जायँ !

भूखी सी युगों की रात–
करुणा की विकल बरसात–
पतझर की चिता की बात–

जीवन में हुए जो छिद्र,
उनको मत स्वरित कर जायँ !
मेरे पंख ये झर जायँ !

१७

नहीं कोई, नहीं कोई !

सतत अपनी पुकारों पर
सतत अपनी गुहारों पर
सुनाई पड रहा केवल
मुझे समवेदना का स्वर

यहाँ आकर मुझे मझधार से
तट पर लगा दे जो—
नहीं कोई, नहीं कोई ।

नयन में देखकर पानी
समझता विश्व अज्ञानी
सुनाई पड रही केवल
मुझे उपदेश की वाणी

१७

नहीं कोई, नही कोई !

सतत अपनी पुकारो पर
सतत अपनी गुहारों पर
सुनाई पड रहा केवल
मुझे समवेदना का स्वर

यहाँ आकर मुझे मझधार से
तट पर लगा दे जो—
नही कोई, नही कोई।

नयन में देखकर पानी
समझता विश्व अज्ञानी
सुनाई पड रही केवल
मुझे उपदेश की वाणी

१८

प्राण, तुम दूर भी
प्राण, तुम पास भी

तुम गगन-दामिनी
पूर्णिमा - चाँदनी
रूप की दीप - लौ
तुम धरा की बनीं।

चिर जलन के तृषित
इस शलभ प्राण की
प्राण, तुम तृप्ति भी
प्राण, तुम प्यास भी।

तुम गगन में पली
तुम सुधा से ढली
तुम धरा-मानसर—
बीच छवि की कली,

१८

प्राण, तुम दूर भी
प्राण, तुम पास भी

तुम गगन-दामिनी
पूर्णिमा - चाँदनी
रूप की दीप - लौ
तुम धरा की बनीं ।

चिर जलन के तृषित
इस शलभ प्राण की
प्राण, तुम तृप्ति भी
प्राण, तुम प्यास भी ।

तुम गगन में पली
तुम सुधा से ढली
तुम धरा-मानसर—
बीच छवि की कली,

१६

किसी के रूप के बादल—

मुझे सोने न देते हैं
मुझे रोने न देते हैं
कभी क्षण एक भी अपना
मुझे होने न देते हैं

रहे घिर प्राण आँगन मे
किसी के रूप के बादल !

कभी मैं गा नहीं पाता
कभी मुसका नहीं पाता
किसी को खोल उर अपना
कभी दिखला नहीं पाता

रहे छा आज तन मन में
किसी के रूप के बादल

१६

किसी के रूप के बादल—

मुझे सोने न देते हैं
मुझे रोने न देते हैं
कभी क्षण एक भी अपना
मुझे होने न देते हैं

रहे घिर प्राण आँगन मे
किसी के रूप के बादल !

कभी मैं गा नहीं पाता
कभी मुसका नहीं पाता
किसी को खोल उर अपना
कभी दिखला नहीं पाता

रहे छा आज तन मन में
किसी के रूप के बादल

२०

किसी की आँख के सपने—

मुझे चंचल बनाते हैं
मुझे विह्वल बनाते हैं
दिखा कर रूप की दुनिया
मुझे पागल बनाते हैं

नयन मे बस रहे मेरे
किसी की आँख के सपने !

मधुर करते कभी जीवन
गरल करते कभी जीवन
उठा कर रूप के बादल
कभी ये घेरते तन मन

पलक में फँस रहे मेरे
किसी की आँख के सपने !

२०

किसी की आँख के सपने—

मुझे चंचल बनाते हैं
मुझे विह्वल बनाते हैं
दिखा कर रूप की दुनिया
मुझे पागल बनाते हैं

नयन मे बस रहे मेरे
किसी की आँख के सपने!

मधुर करते कभी जीवन
गरल करते कभी जीवन
उठा कर रूप के बादल
कभी ये घेरते तन मन

पलक में फँस रहे मेरे
किसी की आँख के सपने!

२१

मैं तुम्हारी छाँह में चलता रहा, तुमने न जाना ?
सच कभी, तुमने न जाना ?

रूप की किरणें तुम्हारी
ले सदा मैं मुस्कराया
याद के बादल तुम्हारे
ले नयन अपना सजाया

मैं तुम्हारे स्वप्न में पलता रहा तुमने न जाना ?
सच कभी, तुमने न जाना ?

साँस की छाया तुम्हारी
छू सदा जीवन बिताया
प्राण का सौरभ तुम्हारा
छू सजल यौवन बनाया

मैं तुम्हारा स्नेह ले जलता रहा, तुमने न जाना ?
क्या कभी, तुमने न जाना ?

२१

मैं तुम्हारी छाँह में चलता रहा, तुमने न जाना ?
सच कभी, तुमने न जाना ?

रूप की किरणें तुम्हारी
ले सदा मैं मुस्कराया
याद के बादल तुम्हारे
ले नयन अपना सजाया

मैं तुम्हारे स्वप्न में पलता रहा तुमने न जाना ?
सच कभी, तुमने न जाना ?

साँस की छाया तुम्हारी
छू सदा जीवन बिताया
प्राण का सौरभ तुम्हारा
छू सजल यौवन बनाया

मैं तुम्हारा स्नेह ले जलता रहा, तुमने न जाना ?
क्या कभी, तुमने न जाना ?

२२

मेरी सुधि क्या आयी न कभी ?

सुन्दरता की ओ कुन्दकली !
कोमल किसलय की गोद पली !
पागल भौंरों का दल तुमसे
हँसती उपवन की कुंजगली
अपनेपन से बेसुध पगली,

अपनी आँखों में क्या तुमने
मेरी आँखें पायीं न कभी ?
मेरी सुधि क्या आयी न कभी ?

जीवन मधु से चंचल चंचल
तन-मन मधु से कोमल कोमल
उर में बन्दी कर जग का मन
अपने में ही विह्वल विह्वल
सरले ! क्या खेल नहीं हो छल?

२२

मेरी सुधि क्या आयी न कभी ?

सुन्दरता की ओ कुन्दकली !
कोमल किसलय की गोद पली !
पागल भौंरों का दल तुमसे
हँसती उपवन की कुंजगली
अपनेपन से बेसुध पगली,

अपनी आँखों में क्या तुमने
मेरी आँखें पायीं न कभी ?
मेरी सुधि क्या आयी न कभी ?

जीवन मधु से चंचल चंचल
तन-मन मधु से कोमल कोमल
उर में बन्दी कर जग का मन
अपने में ही विह्वल विह्वल
सरले ! क्या खेल नहीं हो छल?

२३

मैं देख रहा तुमको रानी !

मैं देख रहा तुमको विस्तृत
तम की आँखों को फैलाकर—
तुम दूर किसी घर के आँगन
में बैठीं अलकें बिखरा कर—

तुलसी के सम्मुख थाल सजा
पूजा हित घी के दीप जला

निज रूप किरण फैला, करती
सी भावी प्रिय की अगवानी !
मैं देख रहा तुमको रानी !

मैं सोच रहा तुमको रानी !

मैं सोच रहा तुमको, यद्यपि
तुमको मेरी पहचान नहीं।

२३

मैं देख रहा तुमको रानी !

मैं देख रहा तुमको विस्तृत
तम की आँखों को फैलाकर—
तुम दूर किसी घर के आँगन
में बैठीं अलकें बिखरा कर—

तुलसी के सम्मुख थाल सजा
पूजा हित घी के दीप जला

निज रूप किरण फैला, करती
नी भावी प्रिय की अगवानी !
मैं देख रहा तुमको रानी !

मैं सोच रहा तुमको रानी !

मैं सोच रहा तुमको, यद्यपि
तुमको मेरी पहचान नहीं।

२४

आ सकोगी ?

आ सकोगी प्राण, क्या इन बन्धनों में आ सकोगी ?

शून्य मन्दिर में गये भर
क्रन्दनों के गान मेरे,
पथ न पाते गहन तम में
प्राण के आह्वान मेरे,

क्या न तुम बन इन घनों की दामिनी मुसका सकोगी ?
आ सकोगी प्राण, क्या इन बन्धनों में आ सकोगी ?

आरती के दीप की जलती
शिखा है प्यास मेरी,
प्यार की लेकर सुरभि नभ
में उड़ी हर साँस मेरी,

२४

आ सकोगी ?

आ सकोगी प्राण, क्या इन बन्धनों में आ सकोगी ?

शून्य मन्दिर में गये भर
क्रन्दनों के गान मेरे,
पथ न पाते गहन तम में
प्राण के आह्वान मेरे,

क्या न तुम बन इन घनों की दामिनी मुसका सकोगी ?
आ सकोगी प्राण, क्या इन बन्धनों में आ सकोगी ?

आरता के दीप की जलती
शिखा है प्यास मेरी,
प्यार की लेकर सुरभि नभ
में उड़ी हर साँस मेरी,

२५

पाषाण मत बनो तुम !

जिसने मधुर स्वरों से
छू छू तुम्हें जगाया,
निज प्रणय रागिनी से
बेसुध तुम्हें बनाया,

कलिके, उसी भ्रमर से
अनजान मत बनो तुम !
पाषाण मत बनो तुम !

सोई तिमिर भवन में
जिसकी प्रणय - कहानी,
कुछ राख के कणों में
जिसकी बची निशानी

२५

पाषाण मत बनो तुम !

जिसने मधुर स्वरों से
छू छू तुम्हें जगाया,
निज प्रणय रागिनी से
बेसुध तुम्हें बनाया,

कलिके, उसी भ्रमर से
अनजान मत बनो तुम !
पाषाण मत बनो तुम !

सोई तिमिर भवन में
जिसकी प्रणय - कहानी,
कुछ राख के कणों में
जिसकी बची निशानी

२६

पागल न यों बनाओ

जीवन बँधा हुआ है
यौवन बँधा हुआ है
अभिशाप से किसी के
क्रन्दन बँधा हुआ है

रूपसि बँधे हुये पर
तुम यों न मुस्कराओ!
पागल न यों बनाओ!

दीपक सभी बुझाकर
बीती सभी भुलाकर
मन में रहा कभी का
आशा सभी मिटाकर

मत सो रहे हृदय को
निज व्यंग्य से जगाओ!
पागल न यों बनाओ।

२६

पागल न यों बनाओ

जीवन बँधा हुआ है
यौवन बँधा हुआ है
अभिशाप से किसी के
क्रन्दन बँधा हुआ है

रूपसि बँधे हुये पर
तुम यों न मुस्कराओ !
पागल न यों बनाओ !

दीपक सभी बुझाकर
बीती सभी भुलाकर
मन सो रहा कभी का
आशा सभी मिटाकर

मत सो रहे हृदय को
निज स्पर्श से जगाओ !
पागल न यों बनाओ।

२७

किसने मुझे पुकारा?

यह आज किस परी ने
किस कण्ठ बाँसुरी ने
बेसुध मुझे बनाया
किस कुञ्ज की पिरी ने

उर बीच यों बहाकर
मधु की अथाह धारा
किसने मुझे पुकारा?

यह कौन उर्वशी सी,
किस लोक में बसी सी,
मुझमें जगा रही है
अज्ञात बेबसी सी

टूटी कभी नहीं जो
वह तोड़ मौन कारा—
किसने मुझे पुकारा?

२७

किसने मुझे पुकारा ?

यह आज किस परी ने
किस कण्ठ बाँसुरी ने
बेसुध मुझे बनाया
किस कुञ्ज की पिकी ने

उर बीच यों बहाकर
मधु की अथाह धारा
किसने मुझे पुकारा ?

यह कौन उर्वशी सी,
किस लोक में बसी सी,
मुझमें जगा रही है
अज्ञात बेबसी सी

टूटी कभी नहीं जो
वह तोड़ मौन कारा—
किसने मुझे पुकारा ?

२८

आ गयीं तुम प्राण, टूटे
बन्धनों में आ गयीं तुम !

स्नेह का सागर किसी अभि-
शाप से मरु हो गया था,
स्वप्न का बादल घुमड़-घिर
फिर गगन में खो गया था

पर सघन घन का मधुर वर-
दान ले निज लोचनों में
छा गयीं तुम प्राण, मेरे
लोचनों में छा गयीं तुम !

किरण-तारों पर उषा के
जब कि मन ने गान गाया
प्राण के नव कुसुम कुंजों
में तभी पतझार छाया

२८

आ गयीं तुम प्राण, टूटे
बन्धनों में आ गयीं तुम !

स्नेह का सागर किसी अभि-
शाप से मरु हो गया था,
स्वप्न का बादल घुमड़-घिर
फिर गगन में खो गया था

पर सघन घन का मधुर वर-
दान ले निज लोचनों में
छा गयीं तुम प्राण, मेरे
लोचनों में छा गयीं तुम ।

किरण-तारों पर उषा के
जब कि मन ने गान गाया
प्राण के नव कुसुम कुंजों
में तभी पतझार छाया

२६

कहाँ आ गया मैं ?

न मुझको किसी ने कभी था पुकारा
मिला इंगितों का मुझे कब सहारा
न टूटी कभी प्राण की अन्ध कारा

पडा सिन्धु में एक कण मैं कभी था
कि सहसा कठिन तोडकर बन्धनों को
गगन मे बना मुक्त घन छा गया मैं

कहाँ आ गया मैं ?

न क्षण भर रुका पन्थ पर अन्ध राही
कि निर्बन्ध होकर चला मैं सदा ही
नहीं ही थका स्नेह संभार - वाही

भटकता रहा दूर जिससे हुआ मैं
क सहसा हटाकर गगन आवरण को
उसी अक में फिर शरण पा गया मैं

२६

कहाँ आ गया मैं ?

न मुझको किसी ने कभी था पुकारा
मिला इंगितों का मुझे कब सहारा
न टूटी कभी प्राण की अन्ध कारा

पड़ा सिन्धु में एक कण मैं कभी था
कि सहसा कठिन तोड़कर बन्धनों को
गगन मे बना मुक्त घन छा गया मैं

कहाँ आ गया मैं ?

न क्षण भर रुका पन्थ पर अन्ध राही
कि निर्बन्ध होकर चला मैं सदा ही
नहीं ही थका स्नेह संभार - वाही

भटकता रहा दूर जिससे हुआ मैं
कि सहसा हटाकर गगन आवरण को
उसी अंक में फिर शरण पा गया मैं

३०

प्रिये, प्राण में चाँदनी छा रही है !

व्यथा घुल गयी है
तृषा धुल गयी है
गगन खिल गया है
घटा खुल गयी है,

किसी दूरतम लोक से शून्य पथ पर
अमर ज्योति धारा बही जा रही है !

गयी कल्पना सो
गई चेतना खो
सुधा की सुरभि ही
गयी बेसुधी हो,

कहीं दूर मुझको लहर आज छवि की
किरण की तरी में लिये जा रही है !

३०

प्रिये, प्राण में चाँदनी छा रही है !

व्यथा घुल गयी है
तृषा घुल गयी है
गगन खिल गया है
घटा खुल गयी है,

किसी दूरतम लोक से शून्य पथ पर
अमर ज्योति धारा बही जा रही है !

गयी कल्पना सो
गई चेतना खो
सुधा की सुरभि ही
गयी बेसुधी हो,

कहीं दूर मुझको लहर आज छवि की
किरण की तरी में लिये जा रही है !

३१

चला जा रहा हूँ !

न इस राह का आदि मैं जानता हूँ
न इस राह का अन्त मैं मानता हूँ
दिशा पंथ की एक पहिचानता हूँ
नही जानता छल रहा पंथ को मैं
स्वय पंथ से या छला जा रहा हूँ।
चला जा रहा हूँ !

नहीं है मुझे ध्यान जीवन-मरण का
नही ज्ञान है तप्त कण और तन का
मुझे एक ही ज्ञान है बस, जलन का
नहीं ज्ञात मरु जल रहा आज मुझसे
स्वय या कि मरु में जला जा रहा हूँ !
चला जा रहा हूँ !

नहीं ज्ञात तट पर कि मँझधार हूँ मैं
निराधार हूँ या कि साकार हूँ मैं
यही लग रहा बस, निराकार हूँ मैं
न मालूम, है ढल रहा शून्य मुझमें
स्वय शून्य में या, ढला जा रहा हूँ !
चला जा रहा हूँ !

३१

चला जा रहा हूँ।

न इस राह का आदि मैं जानता हूँ
न इस राह का अन्त मैं मानता हूँ
दिशा पंथ की एक पहिचानता हूँ
नही जानता छल रहा पंथ को मैं
स्वय पंथ से या छला जा रहा हूँ।
चला जा रहा हूँ!

नहीं है मुझे ध्यान जीवन-मरण का
नही ज्ञान है तप्त कण और तन का
मुझे एक ही ज्ञान है बस, जलन का
नहीं ज्ञात मरु जल रहा आज मुझसे
स्वय या कि मरु में जला जा रहा हूँ।
चला जा रहा हूँ।

नहीं ज्ञात तट पर कि मॅझधार हूँ मैं
निराधार हूँ या कि साकार हूँ मैं
यही लग रहा बस, निराकार हूँ मैं
न मालूम, है ढल रहा शून्य मुझमें
स्वय शून्य में या, ढला जा रहा हूँ!
चला जा रहा हूँ!

३३

तुम्हारे प्यार के ये क्षण !

मधुर जिनसे बना बन्धन
जलन भी बन गई चन्दन
बिना माँगे शरण पाकर
मरण भी बन गया जीवन

अमर वरदान बन आये
तुम्हारे प्यार के ये क्षण !

झलक जिनसे उठे सीकर
लहर लेकर उठा सागर
निशा में ज्योति की धारा
बहा कर हँस उठा अम्बर

मदिर मुस्कान बन छाये
तुम्हारे प्यार के ये क्षण !

३३

तुम्हारे प्यार के ये क्षण !

मधुर जिनसे बना बन्धन
जलन भी बन गई चन्दन
बिना माँगे शरण पाकर
मरण भी बन गया जीवन

अमर वरदान बन आये
तुम्हारे प्यार के ये क्षण !

झलक जिनसे उठे सीकर
लहर लेकर उठा सागर
निशा में ज्योति की धारा
बहा कर हँस उठा अम्बर

मदिर मुस्कान बन छाये
तुम्हारे प्यार के ये क्षण !

३४

तुम्हारी प्यास के ये घन !

रहा अब भीग जिनसे तन
रहा अब भीग जिनसे मन
जलन की भूमि पर जिनसे
बरस कर बह चला जीवन

हृदय नभ मे रहे हैं छा
तुम्हारी प्यास के ये घन !

रहे भर बूँद में सागर
गगन में गीत के निर्झर
नये ही बन रहे क्षण क्षण
नयन में इन्द्रधनु के घर

सुधा भू पर रहे बरसा
तुम्हारी प्यास के ये घन !

३४

तुम्हारी प्यास के ये घन !

रहा अब भीग जिनसे तन
रहा अब भीग जिनसे मन
जलन की भूमि पर जिनसे
बरस कर बह चला जीवन

हृदय नभ मे रहे हैं छा
तुम्हारी प्यास के ये घन !

रहे भर बूँद में सागर
गगन में गीत के निर्भर
नये ही बन रहे क्षण क्षण
नयन में इन्द्रधनु के घर

सुधा भू पर रहे बरसा
तुम्हारी प्यास के ये घन !

३५

प्रिय प्राण में समा जा !

यों जी न मैं सकूँगा
मर भी न मैं सकूँगा
रह दूर इस तरह कुछ
कर भी न मैं सकूँगा

हर मौन में समा जा !
हर मान में समा जा !
प्रिय प्राण में समा जा !

यह सिन्धु क्या तरूँ मैं
पथ पार क्या करूँ मैं
रह दूर प्राण, कैसे
आगे चरण धरूँ

३५

प्रिय प्राण में समा जा !

यों जी न मैं सकूँगा
मर भी न मैं सकूँगा
रह दूर इस तरह कुछ
कर भी न मैं सकूँगा

हर मौन में समा जा !
हर मान में समा जा !
प्रिय प्राण में समा जा !

यह सिन्धु क्या तरूँ मैं
पथ पार क्या करूँ मैं
रह दूर प्राण, कैसे
आगे चरण धरूँ

३६

तुमने मुझे जिलाया !

जब प्राण जल रहे थे
मधु गान जल रहे थे
ले प्यास सिन्धु तट पर
अरमान जल रहे थे

तब रूप की सुधा से
तुमने मुझे जिलाया !

थी मिल रही निशानी
मरु की बनी कहानी
दृग सिन्धु में बचा था
दो बूँद भी न पानी

तब प्यार की लहर ले
तुमने मुझे जिलाया !

३६

तुमने मुझे जिलाया !

जब प्राण जल रहे थे
मधु गान जल रहे थे
ले प्यास सिन्धु तट पर
अरमान जल रहे थे

तब रूप की सुधा से
तुमने मुझे जिलाया !

थी मिल रही निशानी
मरु की बनी कहानी
दृग सिन्धु में बचा था
दो बूँद भी न पानी

तब प्यार की लहर ले
तुमने मुझे जिलाया !

३७

शिथिल होंगे न ये बन्धन !

तुम्हें मन में पुकारूँगा
तुम्हे बन में पुकारूँगा
गगन का मान बन कर मैं
तुम्हें घन में पुकारूँगा

नयन से फूल जो झरते
बना देंगे मधुर जीवन !
शिथिल होंगे न ये बन्धन !

लहर में घर बना लूँगा
व्यथा को वर बना लूँगा
विषम तम को तुम्हारे
हास का निर्झर बना लूँगा

३७

शिथिल होंगे न ये बन्धन !

तुम्हें मन में पुकारूँगा
तुम्हे बन में पुकारूँगा
गगन का मान बन कर मैं
तुम्हें घन में पुकारूँगा

नयन से फूल जो झरते
बना देंगे मधुर जीवन !
शिथिल होंगे न ये बन्धन !

लहर में घर बना लूँगा
व्यथा को वर बना लूँगा
विषम तम को तुम्हारे
हास का निर्झर बना लूँगा

३८

प्यार के दो फूल हम हैं!

हम मलय के वृन्त पर मधु-
मास के वन में पले हैं,
साधना की होड में स्वर
की सुरभि बन उड़ चले हैं,

जीत के दो फूल हैं प्रिय,
हार के दो फूल हम हैं!

३८

प्यार के दो फूल हम हैं!

हम मलय के वृन्त पर मधु-
मास के वन में पले हैं,
साधना की होड में स्वर
की सुरभि बन उड़ चले हैं,

जीत के दो फूल हैं प्रिय,
हार के दो फूल हम हैं।

३६

जा रहा मैं

आ गया था भूल कर ओ निर्झरी, तेरे किनारे,
दो दिनो को ही सही, थे मिट गये दुख दर्द सारे,

आज फिर बीते दिनों के
गीत गाता जा रहा मैं!

कह रहा कोई कि रुककर सत्य यह सपना बना लो,
इस विजन की रागिनी को ओ पथिक, अपना बना लो,

किन्तु अपने भाग्य पर
आँसू बहाता जा रहा मैं!

जानता हूँ, हैं अकेले ही न जलते प्राण मेरे,
भर रहे आँखें किसी की ये विदा के गान मेरे,

किन्तु मन की बात
मन से ही छिपाता जा रहा मैं!

बह पड़े हैं प्राण मेरे काल की चंचल लहर पर,
कौन जाने सुधि मुझे फिर खींच लाये इस डगर पर,

प्राण रोते जा रहे पर
मुस्कराता जा रहा मैं!

जा रहा मैं

३९

जा रहा मैं

आ गया था भूल कर ओ निर्झरी, तेरे किनारे,
दो दिनो को ही सही, थे मिट गये दुख दर्द सारे,

आज फिर बीते दिनों के
गीत गाता जा रहा मैं !

कह रहा कोई कि रुककर सत्य यह सपना बना लो,
इस विजन की रागिनी को ओ पथिक, अपना बना लो,

किन्तु अपने भाग्य पर
आँसू बहाता जा रहा मैं !

जानता हूँ, हैं अकेले ही न जलते प्राण मेरे,
भर रहे आँखें किसी की ये विदा के गान मेरे,

किन्तु मन की बात
मन से ही छिपाता जा रहा मैं !

बह पडे हैं प्राण मेरे काल की चचल लहर पर,
कौन जाने सुधि मुझे फिर खींच लाये इस डगर पर,

प्राण रोते जा रहे पर
मुस्कराता जा रहा मैं !

जा रहा मैं

कविता-क्रम

कविता-क्रम